Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

The Philosophical Elements in "Bhakti Rasamritam" written by "Kaviratn" Sree Krishn Semwal

Madan Mohan Nauriyal*

Principal Government Inter College Parsundakhal, Pauri Garhwal Uttarakhand

*Corresponding Author Email id: madanmohan20863@gmail.com

Received: 18.11.2023; Revised: 12.12.2023; Accepted: 22.12.2023
©Society for Himalayan Action Research and Development

Abstract: In present communication, the philosophical elements narrated in the "Bhakti Rasamritam" written by Kaviratna Sri Sri Krisna Semwal. Many types of philosophical thought streams have flowed from ancient India, in which Vedatanta, Advaita Vedanta, Nyaya, Vaishshina, Yoga, Mimamsha are the famous philosophical theories. A comparative study of these philosophical principles has been done in Bhakti Rasamritam and an attempt has been made to analyze the philosophical principles in Bhakti Rasamritam.

Keywords: Bhakti Rasamritam, Srikrishna Semwal, Philosophical elements

कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल विरचित भक्ति रसामृतम् में दार्शनिक तत्व

मदन मोहन नौड़ियाल

प्रधानाचार्य, इण्टर कॉलेज परसुण्डाखाल, पौड़ी गढ़वाल

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में कविरत्न श्री श्रीकृष्ण सेमवाल विरचित भक्ति रसामृतम् में दार्शनिक तत्वों का विवेचन किया गया है। प्राचीन भारत से आद्यतन कई प्रकार की दार्शनिक विचार धारायें प्रवाहित हुई हैं, जिसमे वेदान्त, अद्वैत वेदान्त, न्याय, वैशैषिक, योग, मीमांसा सांख्य के प्रख्यात दार्शनिक सिद्धान्त हुए हैं। इन्हीं दार्शनिक सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन भक्ति रसामृतम् से किया गया है तथा भक्ति रसामृतम् में दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करने का प्रयास किया गया है। कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल के कृतित्व पर दृष्टिपात करने से यह परिलक्षित होता है कि उनका ज्ञान व्यापक है। उन्होने काव्य साधना ही नहीं बल्कि भारतीय दर्शनशास्त्र का गहन अध्ययन किया। इनके काव्य मे स्थान–स्थान पर शास्त्रीय पाणित्य का ज्ञान तो होता ही है उनके दार्शनिक दृष्टिकोण का भी विस्तृत परिचय प्राप्त होता है।

दर्शन शब्द के स्वरूप पर समालोचकों ने व्यापक चिन्तन किया है। इस शब्द की व्याख्या भी विविध रूप से उपलब्ध होती है। इस सम्बन्ध में उपलब्ध होने वाले सिद्धान्तों के निष्कर्ष रूप में यही कहना उपयुक्त होगा कि जहां मनुष्य स्वयं को असमर्थ पाता है, जिस समस्या के लिए उसके पास कोई समाधान नही होता जहां वह हाथ पर हाथ रखकर अकर्मण्य एवं किंकर्तव्यविमूढ़ सा हो जाता है ऐसी अलौकिक विकट समस्याओं के समाधान के रूप में हमारे प्राचीन मनीषियों के उर्वर मस्तिष्क से जन्में विचारों को ही वस्तुतः दर्शन की संज्ञा दी जाती

है। यथा जीव, ईश्वर जगत आदि की वास्तविकता को पहचानने के लिए व्यक्ति के पास कोई भी उपाय नहीं है। इन प्रश्नों के उत्तर के रूप में अनादिकाल से प्राप्त होने वाला सनातन सिद्धान्त ही दर्शन कहलाता है।

भारत अनादिकाल के विश्व का गुरू माना गया है। दर्शन शास्त्र में सुकरात व प्लेटो की उमरता के बावजूद सत्यता यह है कि दर्शन विधा का स्रोत भारत की पवित्र भूमि रही है और यहीं से उनके ज्ञान की विभिन्न धारायें मीमांसा, सांख्य, प्रख्यात, दाशर्निक सिद्धान्त हुए। इन विभिन्न दर्शनों में हमें अनेकता मे एकता के दर्शन होते हैं। जैसे किसी ने परमात्मा के मिलन के लिए चार्वाक दर्शन यथा खाओ, पिओ, मौज उड़ाओ को सिद्धान्त अपनाया तो किसी ने समस्त सांसारिक विषयों को तुच्छ और क्षणिक मानते हुए आचार्य शंकर के अद्वैत का प्रतिपादन किया और किसी ने सांसारिक विषयों की सत्ता को मानते हुए ईश्वर के कर्तव्य पर गहन चिन्तन किया। यह दार्शनिक सिद्धान्त विशिष्टाद्वैत के नाम से जाना जाता है, जिसकी स्थापना एवं प्रतिपादक आचार्य रामानुज द्वारा की गयी। कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी ईश्वर को मानते हैं परन्तु ये कभी ईश्वर के हनुमान स्वरूप को मानते हैं तो कभी विभु के रूप में तो कभी देवी के रूप में। इसीलिये इन पर विशिष्टताद्वैत के साथ साथ अद्वैत आदि दर्शनों का आंशिक प्रभाव परिलक्षित होता है। भक्ति रसामृतम् में कवि द्वारा प्रतिपादित दार्शनिक विचारों की समीक्षा निम्नवत् है।

भक्ति रसामृतम् में वेदान्त दर्शन

वेदान्त दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण संसार का मूल तत्व एक ही है। किन्तु इसके साथ ही जड़, चेतन, स्थावर जंगम्, इत्यादि भेदों में भी वेदान्त दर्शन मूलत्व को ही व्याप्त मानता है। वेदान्त में अद्वैतब्रह्म की मान्यता दी गयी है। अतः ब्रह्म एक ही है। जीव और ब्रह्म दोनों अलग–अलग नही है। कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी एक ही ईश्वर का चिन्तन ईश प्रार्थना में करते हैं।

''महान्तं सृष्टि कर्तारं मुनीनां चिन्तनाधारम्।''

ईश्वर मायानुपहित् निरूपाधि, र्निविशेष और निर्गुण है। उदाहरणार्थ जिस प्रकार मकड़ी जाले की उत्पत्ति से शरीर से उपादान कारण है तथा चैतन्य से निमित्त कारण है तथा उपादान कारण भी वही ईश्वर है। वेदान्त के अनुसार आत्मा र्निविशेष शुद्ध, बुद्ध, नित्यप्रकाश, ज्ञानमय और सच्चिदानन्द है और यही आत्मा समस्त ब्रह्माण्ड मे व्याप्त है तथा सम्पूर्ण जगत का आधार है। आत्मा की ब्रह्म से एकता है जो पूर्ण और अखण्ड है। इस प्रकार आत्मा ब्रह्म का अंश नही है पर जीव अंशभूत है। ''ईश्वर अंश जीव अविनाशी'' परन्तु कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने आत्मतत्व का चिन्तन भक्ति रसामृतम् में नहीं किया है परन्तु ईश्वर के अनेक रूपों का दर्शन इसमे अवश्य मिलता है। यदि हम वेदों की ओर भी अपनी विहंगम दृष्टि डाले तो वेदों में भी ईश्वर का अनेक नामों से चिन्तन किया गया है यथा इन्द्र, सवितृ उषा, सूर्य विष्णु, अग्नि, अक्ष, रूद्र, पर्जन्य, वरूण, पुरूष, हिरण्यगर्भ, वाक्क सूक्त नासदीय, आदि आदि। सबसे उत्तम ईश्वर की दार्शनिक व्याख्या तो ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में मिलती है।

सहस्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात
सभूमि विश्वतो वृत्वा व्यक्तिष्ठददशाडगुलम्।

उपरोक्त ऋचा से ज्ञात होता है कि परमात्मा सर्वव्यापी है। दूसरी ओर परमात्मा का स्वरूप दृष्टव्य है–

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत
सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषां विधेमा।।

इसी चिन्तन को कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने भक्ति रसामृतम् में भी विवेचित किया है।
भक्ति रसामृतम में जीव ईश्वर का वास्तविक रूपब्रह्म है। जीव की सत्ता भी ब्रह्मं के कारण है अर्थात् मायोपाधिविशिष्ट।

ब्रह्म ईश्वर है और अविद्योपाधि ब्रह्म जीव है कहा गया है जीवो ब्रहवे ना परः जीव परमात्मा का अंश अवश्य है पर उसका ज्ञान और स्वरूप अविद्या से व्यवहित रहता है।
''जीवः परमात्माशं एवं सन् तिरोहितः ज्ञानैश्वर्यो भवति जीवः कर्मानुलिप्त कर्मानुसार फलों का और सुख दुख पा पुण्यादि का भोक्ता है। संसार में जीवन मरण, आवागमन बन्धन मोक्षादि का अधिकारी यही जीव है।

कठोपनिषद और गीता में जीव को अजन्मा, अनश्वर, नित्य, शाश्वत और पुरातन कहा गया है। मरणधर्मा तो जीव का शरीर ही है अगले जन्म तक जीव सूक्ष्म शरीर के आश्रित रहता है। उक्त शरीरों की जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति तीन अवस्थायें होती हैं। कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी जीव का कल्याण करने वाली जगदम्बा, विभु, ज्वाल्पा, सर्वमंगला, कात्यायनी, हनुमान आदि दैवीय शक्तियों को मानते हैं। इनके अनुसार जीव उक्त शक्तियों के अधीन व आश्रित है। जैसा कि कवि के अधोलिखित श्लोक से स्वयं स्पष्ट होता है–

त्वमसि जीवन गीति सुगायिका
त्वमसि जीवन नीति विधायिका
त्वमसि जीवन भीति विनाशिका
त्वमसि जीवन रीति सुचालिका

भक्ति रसामृतम् और जगत

वेदान्त के अनुसार यह जगत असत् है, मिथ्या है, स्वप्नवत् है, ब्रह्मसत है पर माया न सतः न असत है। माया न तो सदा विद्यमान रहती है और उसका नितान्त अभाव होता है। जगत इसी का प्रमाण है। ब्रह्म इसका विवर्त भी इसक विद्यमानता में रज्जु और सर्प का आभास होता है और परम ज्ञान के कारण यदि इसका विनाश होता है तो सब कुछ ब्रह्ममय हो जाता है जैसा कि सर्व खल्विदं ब्रह्म इस महावाक्य में निर्दिष्ट किया गया है कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी जगत को असार एवं मिथ्या मानते हैं। परमात्मा की कृपा से ही जगत का कल्याण होता है जैस कि भक्ति रसामृतम् हनुमत्यसुप्रभातम् से स्पष्ट है–

जगद्विताथर्ं प्रभुकार्य पूर्त्यै
शिवांश भूता वसुधरा वतीर्णः
कविस्वरूप प्रियवायुसूनुः
करोतु नित्यं मम् सुप्रभातम्

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने जगत के मिथ्यात्व को अपने ग्रन्थ मे प्रकारान्तर से बहुधा प्रतिपादित किया है। जीवन का कष्टप्रदस्थिति को झेलते हुए व्यक्ति अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु को छोड़ने के लिए उद्यत् हो जाता है। ऐसी विचारधारा से कवि ने जगत के मिथ्यात्व को ही प्रकारान्तर से परिलक्षित किया है जो कि अद्वैत वेदान्त के जगतमिथ्यात्व सिद्धान्त से अत्यन्त सन्निकट स्थित है। कवि ने स्वयं लिखा है–

जनः कश्चिल्लौक वहुविधिं पवित्रं सुविमलं
परिज्ञातु रूपं जननितव सौम्यं प्रियकरम्
निजं भव्ये गेह सुतमपि शुभांचारू चरितां
प्रियां पत्नीं व्यक्त्वा भ्रमतिभव दुःखौद्यविकलः

भक्तिरसामृतम् व न्याय दर्शनः

न्याय का अर्थ पहले वेदों की उचित विधि से व्याख्या करना था। बाद में वात्स्यायन् ने प्रमाणैरर्थ परीक्षणन्यायः अर्थात् प्रमाणो अर्थ की परीक्षा करना न्याय है। गौतम न्याय सूत्र के प्रणोता माने गये न्याय के भाष्यकार वात्स्यायन माने गये हैं। न्यायदर्शन में भी ईश्वर जगत व जीव के सम्बन्ध में हमे निम्न विचार मिलते हैं–ईश्वर काणं पुरूषः कर्माफल्य दर्शनात्।

न्याय दर्शन में ईश्वर

उदयानाचार्य ने ईश्वर की सिद्धि के लिए अपनी न्याय कुसुमाजंलि की रचना की थी। इसमें ईश्वर का निम्न प्रकार वर्णन है–

ईश्वरोडयं निराधारः सर्वेज्ञः सर्वशक्तिमान्
अनादिरविकारी चानन्तः सर्वगतो विभुः
सच्चिदानन्द रूपोडपि नित्य तृप्ता निराश्रयः
सर्गे स्थितो लये हेतुः नित्य तृप्तो निराश्रयः

अर्थात ईश्वर निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अनादि अनन्त, सर्वव्यापक, सच्चिदानन्दरूप, दयालु, न्यायकारी तथा सृष्टि की रचना पालन एवं संहार का हेतु है। वह सदातृप्त है, किसी के आरू में नही रहता। न्याय दर्शन ईश्वर को आत्मा का एक प्रभेद मानता है। उसे ही परमात्मा कहा गया है। आत्मात्व जाति और ज्ञान गुण दो लक्षण ईश्वर में भी विद्यमान है। न्याय दर्शन मे ईश्वर को जगतकर्ता, वेद निर्माता, जीवों के शुभाशुभ कर्मो का अधिष्ठा माना गया है। परमात्मा मे आठ गुणों का निवास है–ज्ञान, इच्छा और प्रयत्न ये तीन विशेष गुण तथा संख्या, परिमाण, पृथकत्व,सयोग और विभाग ये पांच सामान्य गुण हैं।

भक्तिरसामृतम् में ईश्वर

कवि रत्न श्रीकृष्ण सेमवाल के भक्तिरसामृतम् का ईश्वर अनेक रूपों में दिखाई देता है ईश प्रार्थना में तो ईश्वर का वर्णन मुनियों के चिन्तन का आधार, समस्त गुणों की खान, सृष्टि का रचनाकर्ता के रूप में दर्शित होता है। परन्तु यह ईश्वर कभी हनुमान के रूप में तो कभी देवी

के रूप में भी दिखाई देता है। भक्तिरसामृतम् में हमे ईश्वर की अवतारणा नाना रूपों में दिखाई देती है। कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल जिस ईश्वर की संकलप्ना करते हैं वह न्यायदर्शन में विवेचित ईश्वर के सर्वधा अनुकूल दिखाई पड़ता है। न्याय दर्शन जिस ईश्वर को सर्वज्ञ, निराधार, सृष्टिकर्ता पालनकर्ता व संहारक मानता है। उसी तरह कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी स्वाभिमत् ईश्वर को विवेचित करते हुए लिखते हैं कि वह ईश्वर सृष्टिकर्ता है। ऋषियों के चिन्तन का आधार है गुणों का सागर है वही वन्दनीय है वही शरण्य है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि कवि न्याय दर्शन के सिद्धान्त को ही पुष्ट करते हैं।
न्यायदर्शन तथा भक्तिरसामृतम् में जीव

न्यायदर्शन आत्मा के दो भेद मानता है, जिनमें प्रथम है जीवात्मा तथा दूसरा परमात्मा। ये दोनों आत्मा प्राणी के शरीर में विद्यमान रहते हैं। जीवात्मा शरीर के माध्यम से अपने पूर्व कार्य और अधर्म के फल सुख दुख का भोग तथा अपने भले बुरे कार्यो द्वारा सुख दुख का भोग तथा अपने भले बुरे कार्यो द्वारा नये कार्यो का संचय करता है और परमात्मा उसके इन सभी व्यापारों का साक्षी और सहायक होता है।
वेद की भी ऋचा है–

द्वा सुपर्णा सायुजा सरवाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वति अनश्चन न्योभि चाकशीति

भक्ति रसामृतम् में जीव का निम्नवत् वर्णन है–

भवति चेदनले भुवियाशिवे
दहन शक्तिरतीव भयावहा
तदपि ते कृपया प्रतिभांति में
जननि हे सकलार्ति हरे प्रिये

न्याय दर्शन व भक्ति रसामृतम् में जगत

परमात्मा जगत का कर्ता है। वह जीवात्मा अपने पूर्वकर्मो का फलभोग प्रदान करने तथा जन्ममरण के बन्धन से मुक्त होने के लिए उद्योग करने का अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से जगत की रचना करता है। इस कार्य में पृथ्वी, जल तेज वायु के परमाणु तथा जीवात्मा के पूर्वाजितं कर्म, धर्म, अधर्म उसके उपकरण होते हैं। न्यायमत मे आत्मा का स्वरूप विवेचन करते हुए कुछ प्रश्न आते हैं।

सर्वप्रथम तो यही विचारणीय है कि न्याय ने आत्मा के अतिरिक्त परमाणु, मन, आकाश, काल, दिक आदि को भी नित्य माना है। सच्चा दर्शन वही है जो एक ही नित्य पदार्थ की सत्ता मानकर अन्य को उस एक ही से परिचालित माने। न्याय ने ईश्वर को जगत का एक निमित्त कारण माना है। मानो वह कोई लौकिक कर्ता हो जो परमाणु से जगत की सृष्टि करता है। उसे सृष्टि कार्य के लिए उपादान कारणों पर अवलम्बित रहना पड़ता है। परन्तु उपादानों की सत्ता पर अवलम्बित ईश्वर कैसे सर्वशक्तिमान हो सकता है। इस सम्बन्ध में वेदान्त का ईश्वर

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

अधिक शक्तिशाली सर्वज्ञ सर्वगत है जो जगत का उपादान कारणी भी है और निमित्त कारण भी।

उपाधि की प्रधानता से उपादान कारण तथा स्व की प्रधानता से निमित्त कारण किन्तु न्याय के इस दोष का निराकरण नहीं किया जा सकता। नैयायिक यह भी मानत हैं कि चैतन्य आत्मा का एक आकस्मिक गुण है जो उसमें शरीर होने पर उत्पन्न होता है। ज्ञान इच्छा आदि क्रियायें देहधारी आत्मा की करती है। देहविहीन होते ही उनका सर्वथा लोप हो जाता है। जगत का वर्णन भक्तिरसामृतम् के कामना नामक खण्ड काव्य में इस प्रकार परिलक्षित होता है।

जगति येडपि च वस्तु चया अहो
विरचिताः किल ते च सदात्वया
जननि तैः सह ते तुलना यदि
प्रकुस्ते कविरत्न तदज्ञता

वैशेषिक दर्शन में ईश्वर

इस दर्शन के नाम वैशेषिक के मूल में इसके द्वारा विशेष नामक पदार्थ विशेष की सत्ता की स्वीकृति बतायी जाती है। विशेष का अर्थ है इतर व्यावर्तक अर्थात दूसरों को अलग करने वाला धर्म। ईश्वर के विषय में मीमांषा तथा वैशेषिक सूत्रो में साम्य मिलता है। साक्षात् रूप में दोनों दर्शनों ने ईश्वर का वर्णन नहीं किया। भक्ति रसामृतम् में कई रूपों में परिलक्षित होता है।

वैशेषिक दर्शन में जगत एव जीवः

ईश्वर, जीवों के भोग के लिए सृष्टि रचना की इच्छा करता है। ये भोग मुख्य रूप से जीवों के अदृष्ट कर्मो पर आधारित है। पुरूष जो कुछ भी जीवन में करता हैं पुण्य या पाप उससे अदृष्ट निर्मित होता है। उस अदृष्ट का फल ही भोग है। इसी भोग को जीव को प्राप्ति कराने के लिए ईश्वर सृष्टि रचना की इच्छा करता है। इस प्रकार जगत की रचना करने में परमाणु ही आधार है। वैशेषिक दर्शन एक चेतन सत्ता का ईश्वर के अधीन मानते हैं। जीव की सत्ता के विषय में यह दर्शन कहता है कि अदृष्ट ही संसार का सबसे बड़ा कारण है परन्तु भक्तिरसामृतम् इस दर्शन से प्रभावित नही दिखता।

भक्तिरसामृतम् व योग दर्शन में ईश्वर, जीव जगत

भक्तिरसामृतम् व योग दर्शन में ईश्वर, जीव जगत साधनामार्ग द्वारा ईश्वर की प्राप्ति योग हे। योग दर्शन ईश्वर की सत्ता को मानता है। भक्ति रसामृतम् में सर्वमंगलाशतकम् में योग द्वारा परमात्मशक्ति कुण्डलिनी को जागृत करने का वर्णन इस प्रकार किया गया है।

प्रसुप्तां स्वां शक्तिं निजहृदि निवासैकचतुरां
प्रभिन्दन्तो गूढ़ं कवचमिव षटचक्रममलम्
प्रदातुं चैतन्यं कति कति यतीन्द्रा भगवती

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

तथा गच्छन्त्येते परमशिव सायुज्य पदवीयम्

योगी जन मेरूदण्ड के भीतर ब्रह्मनाड़ी मे पिराये हुए जिन छह कमलों का भेदन करते हैं उन्हे षटचक्र कहा जाता है। उनके नाम हैं– 1. मूलाधार चक्र 2. स्वाधिष्ठान चक्र, 3 मणिपूर चक्र, 4 अनाहत चक्र, 5. विशुद्ध चक्र, 6. आज्ञाचक्र इसी सर्वमंगलाशतक के 48 से 53 वे श्लोक मे इन चक्रों का अलंकारिक वर्णन मिलता है। 54 वें पद्य में सहस्रार चक्र की अवधारणा प्रस्तुत की गयी है। षटचक्र भेदन के बाद जब योगी ब्रह्मरन्ध्र में सहस्रार चक्र की भावना करता है तो परमशिव से कुण्डलिनं शक्ति का संयोग होता है। साधकों का यह अन्तिम ध्येय लययोग कहलाता है। जहां निर्गुण, निराकार, शुद्ध चैतन्य परमानन्द के रूप में भासित होने लगता है। सर्वमंगला शतक में सहस्रार चक्र का ऐसा ही शान्त शिवाकार रूप वर्णित ळें

शिवाकारं शान्तं वरदमभयं सौख्य सदनं
लकाराद्यैवर्ण विलसति वपु हर्ष निकरम्
सुशंरिवन्यार्युक्तं दशशत दलीयं विद्युखि
सहस्राम्भोजन्ते यति–वरवरेण्यं विजयते

अतः योग के अनुसार स्वतः स्पष्ट है कि ईश्वर ही पुरूष विशेष है। यह पुरूष कर्म, क्लेश अज्ञान और रागद्वैषादि से सर्वथाविर्निमुक्त है। वह सत्वरूप है सर्वज्ञ है। सर्वशक्तिमान है, योग के द्वारा जीव रहस्यों का उद्‌घाटन कर सकता है। तथा ईश्वर का साक्षात्कार कर सकता है। आज का विज्ञान भी योग के सामने नतमस्तक हो चुका है। व्यक्ति की आत्मिक साधना में उपयोगी होने साथ–साथ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए योग अत्यावश्यक माना जा चुका है। योग द्वारा ही मनुष्य का इस जगत में कल्याण सन्निहित है।

मीमांसा एवं भक्तिरसामृतम् मे जीव, ईश्वर, जगत

मीमासां का अर्थ है जिज्ञासा, मीमासं का आधार ज्ञान है। ज्ञान आत्मा को होता है। आत्मा ही ज्ञान का आधार है। आत्माकर्ता, ज्ञाता तथा भोक्ता है। आत्मा ही व्यापक विभु है। जब मनुष्य के सुखदायी और दुखदायी अर्थात् काम्य और निषिद्ध पूर्व कर्मो का भोग समाप्त हो जाता है और वह फिर इन काम्य और निषिद्ध कर्मो को नही करता जिससे कि नये भोग तैयार होने की संभावना भी समाप्त हो जाती है तब मोक्ष होता है। दर्शनों में परमात्मा की प्रतिष्ठा तीन रूपों मे हुई है। 1. सृष्टि के आधार पर उसके कर्ता के रूप में 2. वेद के आधार पर उसके रचयिता के रूप में 3. अदृष्ट के आधार पर उसके नियन्ता के रूप में। मीमांसा के आधार पर ये तीनों आधार ईश्वर निरपेक्ष हैं। अर्थात् इनमें ईश्वर की आवश्यकता नही। सृष्टि नित्य है, इसका नाश नहीं होता अतः उसके लिये कर्ता की आवश्यकता नही होती। उसी प्रकार वेद अपौरूषेय है इसलिये वेद के रचयिता के रूप में ईश्वर उत्पन्न नही होता व फिर मीमांस के मानना है कि अच्छे कर्म का फल अच्छा व बुरे कर्म का फल बुरा होता है। फिर इसमें नियन्ता क्या कर सकता है। यद्यपि मीमांसा सूत्र के नवम अध्याय मे देवताधिकरण के प्रसंग में देवताओं के स्वरूप की चर्चा की गयी है। परन्तु ये देवता विग्रहादिमान शरीर धारी नही है। अतः ईश्वर के

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

विषय में मीमांसा को नास्तिक कहा गया है। परन्तु श्रीकृष्ण सेमवाल के भक्तिरसामृतम् में मीमांसा कोई सिद्धान्त लागू नही होता है।

भक्तिरसामृतम् और सांख्य

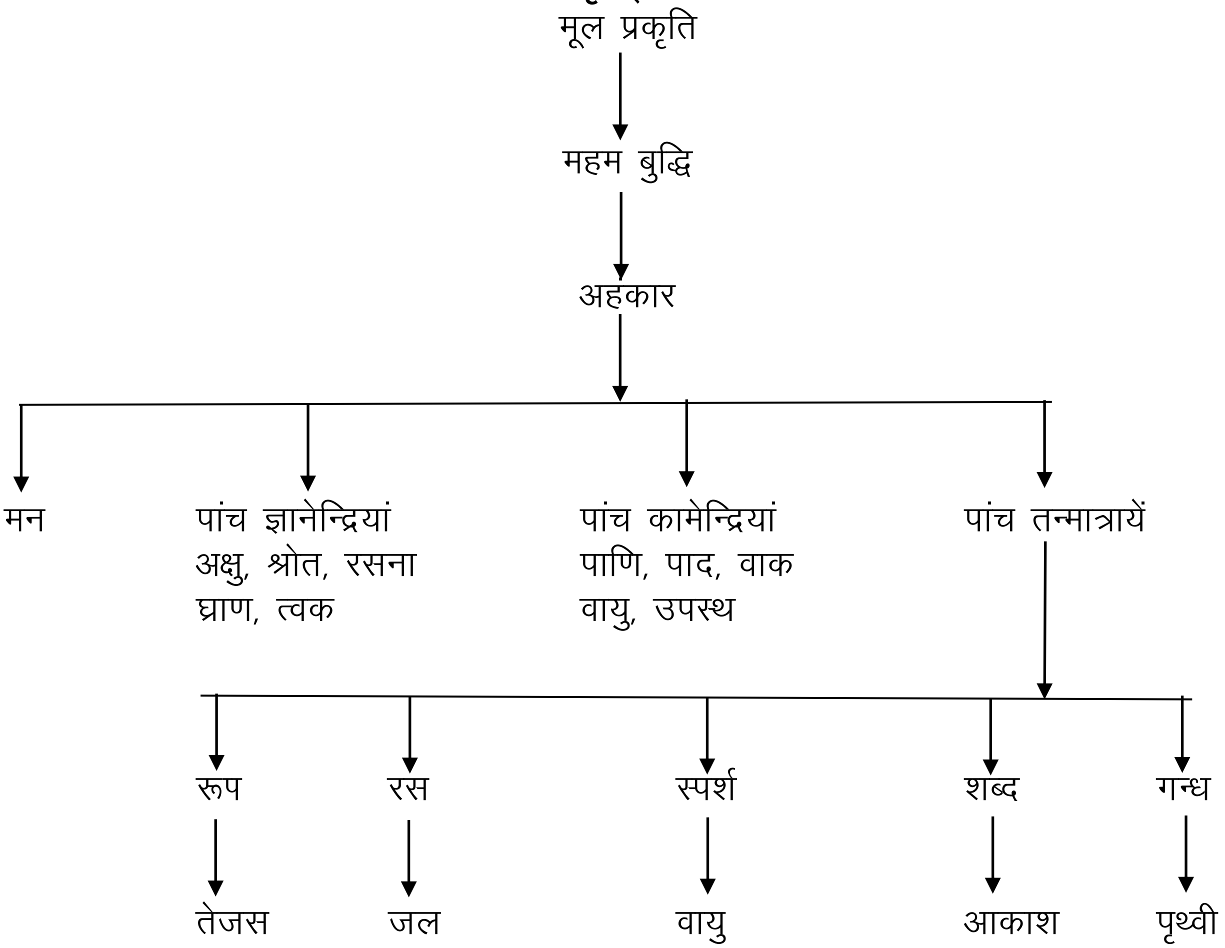

सांख्य में ईश्वर का विवेचन नही है। सांख्य में कर्ताधर्ता बुद्धि ही है। सांख्य ने तत्व चिन्तन द्वारा प्रकृति और उसके परिणाम द्वारा सृष्टि का विकास और उसमें ईश्वर की अनुपयोगिता का प्रतिपादन कर नितान्त मौलिकता का परिचय दिया है।

सांख्य में जीव कतृत्व तथा भोगतृत्व से अलग है। प्रकृति ही जगत का कारण है। प्रकृति का ही प्रत्येक कार्यसत है। प्रकृति ही सृष्टि या जगत का कारण है।
भक्तिरसामृतम् में बुद्धि का उद्‌गम स्रोत मां शारदा का कविरत्न सेमवाल द्वारा सुन्दर वर्णन किया गया है। सांख्य जिस प्रकार बुद्धि से ही संसार के कार्य व्यापार को संचालित मानता है। उसी प्रकार कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल भी भक्तिरसामृतम् में शारदा के स्वरूप को अभिव्यंजित करता है।

संसार बन्धन मुक्ति दे, युक्तिप्रदे मुक्तिप्रदे

हे हे दयामयि शक्ति दे, भक्त प्रिये भक्तिप्रदे
मायाममत्व विनाशिनी प्रज्ञापरे सन्मार्ग दे
मोहान्धकार निमज्जितं मां पाहिदे सद्बुद्धि दे

कवि कहीं बुद्धि की प्रार्थना का रहा है तो कहीं ऋद्धिप्रदा शुभममि सरलस्वभावा के रूप में देवी का गुणगान कर रहा है। भगवती की स्तुति कहीं काव्यमी के रूप मे तो कहीं ज्वाल्पा के रूप में कही शाकम्बरी के रूप में की गयी है।
ऐसा प्रतीत होता है कि देवी के रूप में कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल सांख्य की प्रकृति का ही वर्णन कर रहे हैं तथा परमात्मा की ईश वन्दना के रूप में सांख्य के पुरूष का ही वर्णन कर रहे हैं।

दर्शन के आधार पर भक्तिरसामृतम् का तुलनात्मक अध्ययन हम निम्न प्रकार कर सकते हैं–
आखेट युग में मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करने लग गया था। आकाश में चमकती बिजली, वर्षा, तूफान, झंझावतों से वह किसी अदृश्य शक्ति की सत्ता मानने लगा था। आदि मानव को सूर्य, चन्द्र तारों, आदि को देखकर मनुष्य ने प्रकृति में चेतनता को स्वीकार किया। वैदिक युग से आज तक चिन्तन की अजस्रधारा निरन्तर प्रवाहित हो रही है। इसी चिन्तन के परिणाम स्वरूप आज इक्कीसवीं शताब्दी में भक्तिरसामृतम् काव्य कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल द्वारा विरचित किया गया। इस प्रकार हम प्राचीन दार्शनिक सिद्धान्त तथा भक्तिरसामृतम् में वर्णित कवि के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन निम्नवत् कर सकते हैं।

1. आध्यात्म विद्या सर्वोच्च है– वेदा अपौरूषेय है। प्राचीन ऋषियों का मंत्र द्वारा कहा गया है। आध्यात्मिक ज्ञान में इहलौकिक ज्ञान के साथ पारलौकिक ज्ञान भी समाहित है। मुण्कोषनिषद में आध्यात्म ज्ञान को ब्रह्मविधा कहा गया है। ब्रह्मविद्या आत्मा से सम्बन्ध रखती है। आत्मएव से ही ब्रह्म की प्राप्ति होती है और आत्मा का परमात्मा से मिलन ही मोक्ष है। मोक्ष के बाद पुर्नजन्म नहीं होता। यदि परमात्मा का आत्मा से साक्षात्कार नहीं होता तो मनुष्य को पुर्नजन्म लेना पड़ता है। 84 लाख योनियों में भटकना पड़ता है। गीता मे स्पष्ट लिखा है–
वसासि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृहणाति नरो पराणि
तथा शराणि विहाय जीर्णा
न्यन्यान्यसंयाति नवानि देही

आत्मा का परमात्मा से मिलन के लिए अज्ञान का बन्धन टूटना आवश्यक है। जैसे ही मनुष्य का अज्ञान टूटता है उसे परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है। इसी चिन्तन धारा से प्राचीन वैदिक काल से आज तक का मनुष्य प्रभावित है।

2. जीव तथा ईश्वर अभिन्न है– जीव को ईश्वर से अलग नहीं किया जा सकता। ऋग्वेद के अनेक सूत्रों से हमें ईश्वर की सत्ता का भान होता है। कुछ सूक्तों को हम पुरूष, नासदीय

हिरण्यगर्भ आदि के रूप में गिना सकते हैं। आज का युग भौतिकवादी युग है और भौतिकवाद से मनुष्य की ईश्वर विषयक भूख नहीं मिट सकती। क्योंकि ईश्वर चर और अचर सभी वस्तुओं में व्याप्त है। इसलिये जीव को हम ईश्वर से अलग नही कर सकते।

3. ईश्वर सर्वव्यापी है– ईश्वर की सर्वव्यापकता वेदों से सर्वथा सिद्ध है। क्योंकि यह एकोदेव सर्वभूतेषु गूढ़ सर्वव्यापी सर्वभूतान्रात्मा है। इसीलिये कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने स्तुति परक गीत लिखे ताकि सामान्य जन को ईश्वरानुभूति हो सके।

4. प्रार्थना आत्मा की शान्ति का एकमात्र मार्ग– प्रार्थना के द्वारा आत्मा की शुद्धि होती है। मन की मलिनता दूर होती है। कवि का दार्शनिक चिन्तन भी इसी ओर इंगित करता है।

समे सम्भूय संयामः प्रभोगीतानि गायामः
महान्तं सृष्टिकर्तारं मुनीनाम् चिन्तनाधारम्

5. शब्द नष्ट नहीं होता–शब्द ही ब्रह्म है। जो हम बोलते हैं वह अनन्त आकाश की गहराईयों में समा जाता है। जब हम जोर से बोलते हैं वही ध्वनि प्रतिध्वनि के रूप में वापस लौट कर आती है। इससे स्पष्ट है शब्द नष्ट नहीं होता और प्रार्थनाओं से हमें सत चित आनन्द की प्राप्ति होती है।

6. ईश्वर सर्वसार्मथ्यवान है– ईश्वर ने हर वस्तु को सुव्यवस्थित कर रखा है। सूर्य चन्द्र तारे ग्रह नक्षत्र सभी अपना कार्य समय से कर रहे हैं। वह सगुण भी हैं और निर्गुण भी। उससे कुछ भी छुपा नही है।

7. गुणानां सागरं बन्धं विभुशरणम् समायामः के माध्यम से श्री सेमवाल जी ने ईश्वर के दिव्यगुणों को इंगित किया है।

8. वाणी अगोचर है। श्रीकृष्ण सेमवाल के अनुसार अव्यक्त ईश्वर अपने भक्तों की प्रार्थना पर अवतरित होता है।

9. भक्तिरसामृतम् वसुधेव कुटुम्बकम की भावना पर आधारित है।

प्रभु में राष्टसेवायां
परित्राणे च दीनानां

हम सब भारतभूमि के बालक हैं।

वयं चपला अबोधाः स्म
त्वदीया बालकाः भगवन्

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 18, (2023) 67-77 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v18i1.10

10. श्री सेमवाल जी के कथनानुसार जिस प्रकार स्वर्णांगुलीय कण्ठहार आदि मूलरूप से सोना ही होता है उसी प्रकार ईश्वर अनेक नाम्ना होते हुए भी एक है।

11. ऋग्वेद का वाक्सूक्त आद्याशक्ति सरस्वती का वर्णन है– भक्तिरसामृतम् में कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने आद्याशक्ति सरस्वती का वर्णन किया है। यदि हम वैदिक इतिहास देखे तों उसमे भी निमन वर्णन मिलता है–

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवे भिरूतः मानुषेमि
यं कामये तं तमुग्र कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषि तं सुमेधाय्

वाग्देवी जिस पर कृपा करती है उसे ब्रह्मा के समान बना देती है। वेदों मुं शतपथ ब्राह्मण में वाग्देवी का उल्लेख है और इन्द्रकृत सरस्वती स्तोत्र में सरस्वती को चन्द्र बर्फ हार के समान श्वेत बताया है उसी प्रकार भक्ति रसामृतम् में सरस्वती को वीणावादिनी बुद्धिदात्री अज्ञाननाशिनी कविताकला, कलितेश्वरी धर्माथचिन्तन संरते, हंसानने, मायाममत्व विनाशिनी आदि विशेषणों से वर्णन किया है।

12. वर्णात्मक भगवती सुप्रभातम् में श्रीकृष्ण सेमवाल ने ऋग्वेद के वाक्सूक्त की तरह भगवती की महिमा का गुणगान किया है। ठीक उसी प्रकार व्याकरण शास्त्र के व्याकरण के स्फोटवाद में चार प्रकार की शक्तियों का वर्णन है–बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती और परा। श्रीकृष्ण सेमवाल का भगवतीसुप्रभातम् सम्पूर्ण स्तोत्र अ से प्रारम्भ है, जिसका अर्थ है ब्रह्म अपने दार्शनिक चिन्तन में श्रीकृष्ण सेमवाल ने सर्वखल्विदं ब्रह्म का चिन्तन करते हुए सर्वखल्विदं ब्रह्म का ही निरूपण किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. काव्य प्रकाश, मम्मटाचार्य, ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी, 1960
2. न्याय परिशुद्धि, वैंकटनाथ, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी, 1918
3. पुराण विमर्श, बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1965
4. भीमशतकम्, श्रीकृष्ण सेमवाल, रामजी अग्रवाल नई दिल्ली, 1991
5. सांख्यकारिका, ईश्वरकृष्ण, प्रेम प्रकाशन इलाहाबाद पंचम संस्करण, 1973
6. दिल्लीस्थाः विशंशताब्दीया संस्कृत रचनाकार, डॉ0 चन्द्र भूषण झाः, सचिव दिल्ली संस्कृत अकादमी,
7. भक्ति रसामृतम्, श्रीकृष्ण सेमवाल, रामजी अग्रवाल तिमारपुर, दिल्ली, 1996